NIRVAN SUTRA

निर्वाण सूत्र

शब्द एवं परिभाषाएँ

ज्ञानमार्ग की क्रमबद्ध साधक-शब्दावली • 17 चरणों के अनुसार व्यवस्थित • आवश्यक दृश्य मानचित्रों सहित

NIRVAN DHAM • SEEKER EDITION

साधक संस्करण • COURSE COMPANION

शब्द केवल संकेत हैं. जाँच अपने अनुभव में करनी है.

यह शब्दावली निर्वाण सूत्र के 17 चरणों और उनके प्रश्न-उत्तर पाठों के आधार पर बनाई गई है। इसका उद्देश्य किसी शब्द की हर परंपरा में अंतिम परिभाषा देना नहीं, बल्कि इस पाठ्यक्रम में उस शब्द का आशय साफ़ करना है - ताकि साधक आगे बढ़ते हुए एक ही शब्द को अलग-अलग अर्थों में न पकड़ ले।

पढ़ने का सबसे अच्छा ढंग: परिभाषा को याद न करें। शब्द पढ़ें, फिर देखें - यह मेरे प्रत्यक्ष अनुभव में किस ओर संकेत कर रहा है? जहाँ शब्द अनुभव से नहीं जुड़ता, वहीं प्रश्न पैदा होना चाहिए।

01 • पहले क्रम समझें

अज्ञान से स्थितप्रज्ञ जीवन तक 17 चरण एक शिक्षण-क्रम हैं। किसी उन्नत शब्द को शुरुआती भेदों से काटकर न पढ़ें।

02 • “जानना” किस अर्थ में है?

वस्तु की जानकारी, बौद्धिक समझ और अपने स्वरूप की पहचान - तीनों को एक न मानें।

03 • अनुभव से सावधान

शांति, प्रकाश, आनंद, ख़ालीपन या समाधि मूल्यवान हो सकते हैं, पर जो आता-जाता है उसे अंतिम सत्य मानना इस पाठ्यक्रम का निष्कर्ष नहीं है।

04 • जीवन से भागना नहीं

अद्वैत का अर्थ व्यवहार, संबंध, शरीर, सीमाएँ या ज़िम्मेदारी मिटा देना नहीं। स्पष्टता का परीक्षण साधारण जीवन में भी होता है।

मानचित्र 01

निर्वाण सूत्र का 17-चरणीय ज्ञानमार्ग

यह सीढ़ी नहीं कि हर पुराना चरण पीछे छूट जाए। आगे के चरण पहले भेदों को और सूक्ष्म करते हैं - और अंत में समझ साधारण जीवन में उतरती है।

चरण 01
अज्ञान

चरण 02
जिज्ञासा

चरण 03
विवेक

चरण 04
वैराग्य

चरण 05
श्रवण

चरण 06
मनन

चरण 07
निदिध्यासन

चरण 08
नेति-नेति

चरण 09
साक्षीभाव

चरण 10
अनुभव

चरण 11
अनुभवकर्ता

चरण 12
आत्मविचार

चरण 13
आत्मज्ञान

चरण 14
ब्रह्मज्ञान

चरण 15
अज्ञेयता

चरण 16
शून्यता और मौन

चरण 17
स्थितप्रज्ञ जीवन

पाँच शिक्षण-खंड

- 01-04 • पहचान और पकड़ की जाँच
- 05-07 • सुनना, स्पष्ट करना, स्थिर होना
- 08-12 • द्रष्टा से आत्मविचार तक
- 13-15 • आत्मा, ब्रह्म और अज्ञेयता
- 16-17 • मौन से सहज जीवन

मानचित्र 02

चार मूल भेद - पूरे पाठ्यक्रम की रीढ़

जहाँ भी भ्रम हो, इन चार भेदों पर लौटें। अधिकांश शब्द इन्हीं की किसी गहरी परत को खोलते हैं।

जानकारी ≠ आत्मज्ञान

किसी वस्तु, सिद्धांत या शास्त्र के बारे में जानना एक बात है; उस जानने वाले की पहचान स्पष्ट होना दूसरी।

दृश्य ≠ द्रष्टा

शरीर, विचार, भावना, स्मृति और "मैं"-विचार तक जाने जा सकते हैं। जाँच है - उन्हें जानने वाला क्या है?

अनुभव ≠ सत्य

जो अवस्था आती और जाती है वह अनुभव है। पाठ्यक्रम उस आधार को जाँचता है जिसमें अनुभव प्रकट और लुप्त होते हैं।

अद्वैत ≠ व्यवहार का निषेध

एक आधार की पहचान का अर्थ मनुष्य, संबंध, कर्म, सीमा और उत्तरदायित्व के व्यवहारिक भेदों को मिटाना नहीं।

निर्वाण सूत्र • चरण 01

01

अज्ञान

पहचान की भूल

केन्द्रीय जाँच **मैं अपने को किस मान्यता से पहचान रहा हूँ?**

निर्वाण सूत्र 01

इस 17-चरणीय पाठ्यक्रम का नाम। इसकी फ़िल्में अज्ञान से स्थितप्रज्ञ जीवन तक ज्ञानमार्ग के प्रश्नों को क्रम से खोलती हैं; प्रत्येक चरण में एक मुख्य फ़िल्म और दस प्रश्न-उत्तर फ़िल्में हैं। वीडियो scripts 'निर्वाण' शब्द की कोई अलग औपचारिक परिभाषा नहीं देते, इसलिए यहाँ पाठ्यक्रम के नाम से आगे कोई मनगढ़ंत अर्थ नहीं जोड़ा गया है।

ज्ञानमार्ग 01

समझ, जाँच और प्रत्यक्ष पहचान के सहारे सत्य की ओर जाने वाला मार्ग। यहाँ ज्ञान का लक्ष्य नई सूचनाओं का ढेर लगाना नहीं, बल्कि उस जानने वाले को पहचानना है जो सूचनाओं, विचारों और अनुभवों को जान रहा है।

ज्ञान 01

संदर्भ के अनुसार कभी किसी वस्तु की जानकारी, तो कभी अपने स्वरूप की स्पष्ट पहचान। दोनों को एक न समझें: पुस्तक से तथ्य जाना जा सकता है; ज्ञानमार्ग में प्रश्न यह है कि तथ्य और पुस्तक को जानने वाला कौन है।

साधना 01

अपनी खोज को केवल विचार न रखकर श्रवण, मनन, निरीक्षण और समझ में ठहरने के द्वारा जीवन में परखना। इसका लक्ष्य एक नई 'आध्यात्मिक' छवि बनाना नहीं; पहचान की भूल देखना और समझ को स्वाभाविक होने देना है।

साधक 01

वह व्यक्ति जो प्रश्न को ईमानदारी से अपने जीवन में जाँचता है। साधक होना किसी ख़ास उपलब्धि या पहचान का दावा नहीं; सुनना, विचार करना, देखना और अपनी भूल को स्वीकार करना इसकी व्यावहारिक शुरुआत है।

स्वरूप / वास्तविक स्वरूप 01

यहाँ अपने उस मूल जानने को कहा गया है जो शरीर, विचार, भावना, स्मृति या सामाजिक भूमिका के बदलने पर भी उनके अनुभव को जानता है। इसे कोई नई वस्तु या नया व्यक्तित्व बनाकर पाने की बात नहीं है।

अज्ञान 01

इस पाठ्यक्रम में अपने वास्तविक स्वरूप को न पहचानना और अपने को केवल शरीर, मन, कहानी या छवि मान लेना। यह कम पढ़ा-लिखा होने का नाम नहीं है। रस्सी को साँप समझने की तरह यह पहचान की भूल है: सही देखना होने पर भूल हटती है, कोई वस्तु नष्ट नहीं करनी पड़ती।

वस्तु का अज्ञान 01

किसी बाहरी तथ्य, कला या वस्तु के बारे में जानकारी का अभाव; जैसे किसी नगर का रास्ता न जानना। पढ़कर, पूछकर या अभ्यास से यह कमी पूरी हो सकती है। ज्ञानमार्ग का केंद्रीय प्रश्न इससे अलग, जानने वाले का अज्ञान है।

जानने वाले का अज्ञान 01

सब कुछ जानने का दावा करने वाला व्यक्ति अपने ही "मैं" को बिना जाँचे शरीर, मन या छवि मान लेता है। इस भूल को अतिरिक्त तथ्य जोड़ना भर नहीं मिटाता; अपनी पहचान की जाँच आवश्यक है।

सीखी हुई पहचान 01

नाम, भूमिका, प्रशंसा, आलोचना और पुरानी स्मृतियों से बनी "मैं ऐसा हूँ" वाली छवि। इसके सच होने की कसौटी यह है: क्या यह सीखी गई, क्या यह बदलती है, और क्या यह मुझे दिखती है? जो दिखता और बदलता है, उसे अपने अपरिवर्तनीय स्वरूप के बराबर न रखें।

अहंकार

01

यहाँ केवल घमंड नहीं, बल्कि “मैं यह शरीर-मन हूँ”, “मैं करता हूँ”, “यह मेरा अनुभव है” जैसा दावेदार ‘मैं’-भाव। अज्ञान उसकी ज़मीन है; उसी भूल पर यह सीमित पहचान खड़ी होती है। व्यवहार में व्यक्ति की भूमिका चलती रहती है, पर उसे संपूर्ण ‘मैं’ मान लेना बंधन बनता है।

अधूरापन

01

अपने को सीमित छवि मानने से पैदा हुआ “मेरे भीतर कुछ कमी है” वाला निष्कर्ष। तब मन पूर्णता को उपलब्धि, वस्तु, प्रशंसा या किसी अनुभव में खोजता है। पाठ्यक्रम इस निष्कर्ष की जड़ जाँचता है, केवल इच्छाओं की सूची नहीं।

इच्छा

01

किसी वस्तु, स्थिति या परिणाम की चाह। सामान्य ज़रूरत से समस्या तब बनती है जब उससे यह वादा जोड़ दिया जाए कि “यह मिलते ही मैं पूरा हो जाऊँगा।” उस वादे को साफ़ देखना इच्छा को दबाने से अलग है।

भय

01

किसी प्रिय वस्तु, छवि, संबंध या उपलब्धि के छिनने पर स्वयं के टूट जाने की आशंका। शरीर की उचित सावधानी और झूठी पहचान की रक्षा से उठने वाले भय में अंतर देखना उपयोगी है।

तुलना

01

दूसरे की स्थिति से अपनी क़ीमत मापने की आदत। यह अक्सर इस मान्यता पर टिकी होती है कि ‘मैं’ कोई उपलब्धि या सामाजिक छवि हूँ। तुलना दिखे तो केवल उसे रोकने की कोशिश करने के बजाय उस मान्यता को देखें।

दुःख

01

यहाँ मन में उठने वाला वास्तविक अनुभव, और उससे जुड़ी “मैं ही यह दुख हूँ” वाली पहचान — दोनों के भेद को जाँचा जाता है। ज्ञानमार्ग पीड़ा के अस्तित्व से इनकार नहीं करता; वह पूछता है कि क्या जानने वाला स्वयं उसी अनुभव तक सीमित है।

रस्सी-साँप दृष्टांत

01

धुँधले प्रकाश में रस्सी को साँप समझने से भय सच्चा महसूस हो सकता है, जबकि साँप वस्तुतः था ही नहीं। दीपक रस्सी को नया नहीं बनाता; वह भ्रम हटाता है। पाठ्यक्रम इसे अज्ञान और सही पहचान का उदाहरण बनाता है।

02

निर्वाण सूत्र • चरण 02

जिज्ञासा

प्रश्न का भीतर मुड़ना

केन्द्रीय जाँच — मेरी खोज नई जानकारी की है - या अपने सत्य की?

साधारण कौतूहल / curiosity

02

नई जानकारी इकट्ठी करने की इच्छा। यह उपयोगी है और किसी उत्तर से शांत हो सकती है, पर अक्सर अगली सूचना पर बढ़ जाती है। आध्यात्मिक जिज्ञासा का प्रश्न उस जानकारी को जानने वाले की ओर मुड़ता है।

आध्यात्मिक जिज्ञासा

02

“मैं कौन हूँ?”, “जो बदलता नहीं वह क्या है?” जैसे प्रश्नों की सच्ची खोज। यह तुरंत उधार का उत्तर लेकर प्रश्न बंद नहीं करती; प्रश्न को अनुभव में परखती और उसके साथ धैर्य से रहती है।

सही प्रश्न

02

ऐसा प्रश्न जो ईमानदार हो, अपने जीए हुए अनुभव से जुड़ा हो और अंत में पूछने वाले की ओर लौटे। “मोक्ष कब मिलेगा?” से “जिसे मोक्ष चाहिए, वह कौन है?” की ओर जाना इसका उदाहरण है।

संशय / संदेह

02

किसी बात को लेकर मन का डगमगाना। संदेह को दबाने या हर शिक्षा को बिना जाँचे ठुकराने के बजाय उसकी ठीक-ठीक पहचान करें; मनन में उसी पर तर्क, अनुभव और शिक्षक से जाँच की जाती है। जिज्ञासा संदेह को आगे बढ़ने की सामग्री बना सकती है।

गुरु

02

पाठ्यक्रम के संदर्भ में वह योग्य शिक्षक जो शास्त्र को समझता है और साधक की अनदेखी भूल की ओर संकेत करता है। गुरु का काम साधक की जगह अनुभव करना नहीं; स्पष्ट शिक्षा और प्रश्नों के द्वारा देखने में सहायता करना है।

शास्त्र

02

यहाँ विशेषतः उपनिषदों और उनसे जुड़ी वेदांत परंपरा की शिक्षा, जो खोज के लिए नक्शे की तरह काम करती है। नक्शा दिशा देता है; उसे अपने अनुभव में जाँचना भी ज़रूरी है।

वेदांत / उपनिषद

02

इस पाठ्यक्रम में वेदांत से आशय विशेषतः उपनिषदों में प्रतिपादित आत्मा-ब्रह्म की शिक्षा और उससे जुड़ी विवेचन-परंपरा से है। इन शब्दों को केवल धार्मिक कथन की तरह नहीं, अपने अनुभव और पहचान की जाँच के लिए संकेत की तरह पढ़ें।

अद्वैत

02

अंतिम सत्य को दो स्वतंत्र, परस्पर अलग मूल सत्ताओं में न बाँटने की दृष्टि। पाठ्यक्रम में इसका मुख्य कथन आत्मा और ब्रह्म का अभेद है; व्यवहार में लोग और वस्तुएँ अलग रूपों तथा अलग ज़िम्मेदारियों के साथ दिखाई देते हैं।

मुमुक्षुत्व

02

अज्ञान से बने बंधन से मुक्त होने और अपने वास्तविक स्वरूप को जानने की तीव्र, गंभीर चाह। यह हल्के कौतूहल से गहरी है, पर बाद में “मैं मुक्त व्यक्ति बनूँगा” जैसी नई पकड़ भी बन सकती है; इसलिए चाह के केंद्र में खड़े ‘मैं’ को भी देखना पड़ता है।

बंधन

02

किसी बदलती पहचान, वस्तु या परिणाम पर अपना पूरा होना निर्भर मान लेना। बाहरी परिस्थिति कठिन हो सकती है, लेकिन इस पाठ्यक्रम में मूल आध्यात्मिक बंधन अपने बारे में बनी ग़लत पहचान से जुड़ा है।

मोक्ष / मुक्ति

02

अज्ञान से बनी झूठी पहचान और उसके बंधन का हटना; किसी दूसरी जगह, स्वर्ग या नए अनुभव तक पहुँच जाना नहीं। रोज़मर्रा का जीवन चलता रह सकता है, पर “मैं केवल यह शरीर-मन हूँ” वाला बोझ ढीला पड़ता है।

03

निर्वाण सूत्र • चरण 03

विवेक

बदलने वाले और जानने वाले का भेद

केन्द्रीय जाँच

जो बदल रहा है और जो उसे जान रहा है - क्या दोनों एक हैं?

विवेक 03

नित्य-अनित्य तथा द्रष्टा-दृश्य में भेद करने की स्पष्टता। यह केवल तेज़ बुद्धि, बहस जीतना या दूसरों की कमियाँ पकड़ना नहीं; अपने अनुभव में जो बदल रहा है और जो उस बदलाव को जान रहा है, उनकी पहचान करना है। यही स्पष्टता वैराग्य का आधार बनती है।

बुद्धि 03

विचार करने, निर्णय लेने और समस्याएँ सुलझाने वाला मन का पक्ष। पाठ्यक्रम में यह महत्वपूर्ण साधन है, लेकिन बुद्धि के विचार और निष्कर्ष भी जाने जाते हैं; उन्हें अंतिम जानने वाले के बराबर नहीं रखा जाता।

नित्य 03

जो किसी अवस्था के साथ आता-जाता नहीं और जिस पर बदलते अनुभव प्रकट होते हैं। पाठ्यक्रम इस शब्द का उपयोग जागरूकता की ओर संकेत करने के लिए करता है; किसी अनुभव की लंबी अवधि को नित्य न समझें।

अनित्य 03

जो उत्पन्न होता, बदलता और समाप्त होता है: शरीर की दशा, विचार, भावना, भूमिका, सुखद अनुभव आदि। अनित्य को झूठा या त्याज्य कहना ज़रूरी नहीं; उसे स्थायी पूर्णता का आधार मानने की भूल जाँची जाती है।

द्रष्टा / दृक् 03

देखने और जानने वाला। शुरुआत में आँख वस्तु को, मन आँख को और साक्षी मन को जानता है; जाँच अंततः उस जागरूकता की ओर ले जाती है जो स्वयं किसी दृश्य वस्तु की तरह नहीं दिखती।

दृश्य 03

जो भी देखा, महसूस या जाना जा सकता है; इसमें बाहरी चीज़ों के साथ शरीर, विचार, स्मृति, भावना और “मैं” का विचार भी आते हैं। “दृश्य” का अर्थ बेकार नहीं; केवल इतना कि वह जानने वाले से भिन्न है।

तथ्य 03

जिसे परिस्थिति में जाँचा जा सके, जैसे किसी ने वास्तव में कौन-से शब्द कहे। तथ्य को उससे उठे डर, अर्थ या भविष्य की कल्पना से अलग करना रोज़मर्रा के विवेक का हिस्सा है।

धारणा 03

मन में सीखी और मान ली गई व्याख्या, जैसे “आलोचना का अर्थ है कि मैं असफल हूँ।” धारणा सच हो भी सकती है या नहीं भी; उसे तथ्य या अपने स्वरूप की सीधी पहचान मानने से पहले परखना चाहिए।

विश्वास 03

पाठ्यक्रम के इस भेद में वह कथन जिसे बिना अपनी जाँच के स्वीकार कर लिया गया हो। श्रद्धा से इसका अंतर है: श्रद्धा शिक्षा को जाँचने योग्य मानती है, जबकि अंधा विश्वास जाँच से बचता है।

कल्पना 03

मन द्वारा बनाई गई तस्वीर या संभावना। रस्सी पर साँप की कल्पना की तरह इसका भावनात्मक असर सच्चा लग सकता है, पर कल्पित निष्कर्ष को जाँचा हुआ तथ्य या नित्य सत्य नहीं मानना चाहिए।

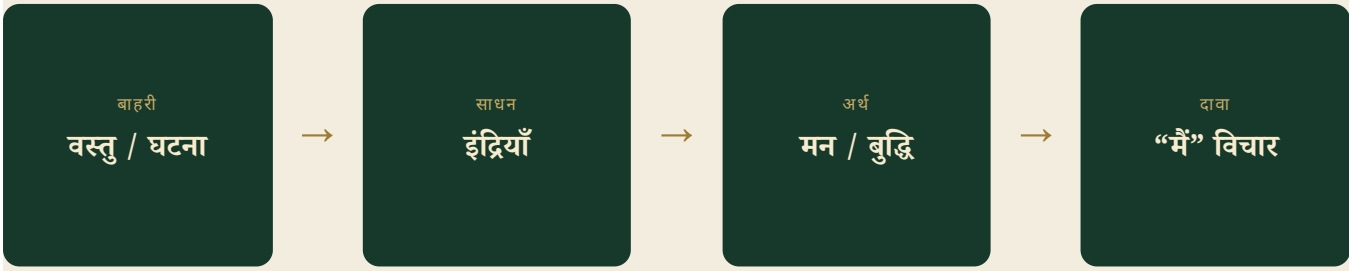
सत्य 03

इस पाठ्यक्रम के वेदांतिक संदर्भ में वह जो अपने आधार के लिए किसी और पर निर्भर नहीं और बदलती अवस्थाओं में भी बना रहता है। इसे किसी क्षणिक सुखद अनुभव या केवल सत्यापित तथ्य से अलग समझें; विस्तृत भेद चरण 14 में “सत्य, मिथ्या, असत्य” के अंतर्गत है।

मानचित्र 03 • विवेक

दृश्य से द्रष्टा की ओर

यह नक्शा किसी “अंदर बैठे छोटे गवाह” को स्थापित नहीं करता। इसका काम बस इतना है कि हर ज्ञात परत को पहचानें - और देखें कि जानना स्वयं किस श्रेणी में आता है।



इन सभी का पता किसमें है?

जानना / जागरूकता

यह स्वयं किसी नई दृश्य वस्तु की तरह सामने नहीं आती; यही द्रष्टा-दृश्य विवेक की सूक्ष्म दिशा है।

04

निर्वाण सूत्र • चरण 04

वैराग्य

संसार में रहते हुए भीतर की आज़ादी

केन्द्रीय जाँच **क्या मेरी पूर्णता किसी वस्तु, व्यक्ति या फल पर टिकी है?**

राग 04

वस्तु, व्यक्ति, भूमिका या परिणाम से ऐसा चिपकाव जिसमें अपनी शांति और पहचान उसी पर निर्भर लगने लगे। किसी चीज़ का उपयोग, आनंद या देखभाल अपने-आप राग नहीं है; “इसके बिना मैं पूरा नहीं” वाला दावा जाँचने योग्य है।

वैराग्य 04

राग की पकड़ से भीतर की स्वतंत्रता। यह संसार, परिवार या काम छोड़ने का आदेश नहीं और न ही भावनाहीन उदासी है। काम और प्रेम पूरे मन से चल सकते हैं, जबकि फल पर अपनी संपूर्णता निर्भर मानने की ज़रूरत कम होती है।

आसक्ति 04

चिपकाव का वह रूप जिसमें दूसरे व्यक्ति या वस्तु से अपनी कमी भरने की अपेक्षा जुड़ती है; उसके खोने का भय और उसे नियंत्रित करने की चाह बढ़ सकती है। प्रेम और आसक्ति साथ दिखाई दें तो पूछें: मैं उसका भला चाहता हूँ, या उससे अपने बारे में आश्वासन?

प्रेम 04

दूसरे के कल्याण और स्वतंत्रता के प्रति खुली देखभाल। पाठ्यक्रम इसे पकड़ या नियंत्रण से अलग करता है; समझदार सीमाएँ और ज़िम्मेदारी प्रेम के विरुद्ध नहीं हैं।

निराशा / उदासीनता 04

चोट के बाद मन का भारी या बंद हो जाना। वैराग्य इसके विपरीत समझ से आया खुलापन है जिसमें जीवन, कर्म और प्रेम की जगह बनी रहती है।

इच्छा का दमन 04

इच्छा को समझने के बजाय ज़ोर से दबाना। इससे अंदर की पकड़ बनी रह सकती है। पाठ्यक्रम इच्छा के उस वादे को देखने को कहता है कि किसी वस्तु के मिलने से स्थायी पूर्णता मिल जाएगी।

भोग 04

किसी सुखद वस्तु या अनुभव का उपभोग। यहाँ सावधानी यह है कि उससे क्षणिक राहत मिल सकती है, पर उससे अधूरेपन की मूल मान्यता आवश्यक रूप से नहीं मिटती; बार-बार की चाह और मज़बूत भी हो सकती है।

पलायन / बाहरी त्याग 04

परिस्थिति से दूर जाना, जो कभी व्यावहारिक रूप से उचित भी हो सकता है, पर अपने-आप वैराग्य नहीं है। वैराग्य की कसौटी भीतर की पकड़ है; घर छोड़े बिना भी आज़ादी और घर छोड़कर भी चिपकाव संभव है।

05

श्रवण

शिक्षा को अपने ऊपर लागू करके सुनना

केन्द्रीय जाँच **शिक्षा मेरे अपने अनुभव के बारे में क्या कह रही है?**

श्रवण 05

योग्य शिक्षक से अपने स्वरूप के विषय में शास्त्र की स्पष्ट शिक्षा को ध्यान से, आवश्यक होने पर बार-बार सुनना। कानों से शब्द सुनना या उन्हें रट लेना पर्याप्त नहीं; “इसका मेरे अनुभव के लिए क्या अर्थ है?” पूछकर अपनी दृष्टि को खुला रखना है।

श्रद्धा 05

शिक्षा और शिक्षक को जाँचने योग्य मानकर दिया गया खुला भरोसा। इसका अर्थ प्रश्न बंद करना नहीं; श्रद्धा साधक को ईमानदार परीक्षा तक ले जाती है। अंधविश्वास बिना जाँचे मानने और निर्भर रहने पर अटक सकता है।

महावाक्य 05

उपनिषदों का ऐसा प्रमुख वाक्य जो अलग सूचना देने के बजाय आत्मा और ब्रह्म की एकता की ओर सीधे संकेत करे। वाक्य का आशय शरीर या व्यक्तिगत घमंड को ब्रह्म घोषित करना नहीं, जानने वाली चेतना की पहचान स्पष्ट करना है।

“तत्त्वमसि” 05

“वह तुम हो”: ‘वह’ पूरे का आधार और ‘तुम’ शरीर-मन की सीमित छवि नहीं, उनका जानने वाला स्वरूप है। इसे अपने बारे में अभी जाँचने वाला कथन समझें, दूर के लक्ष्य की सूचना नहीं।

शम 05

मन की शांति और भटकाव को देख-सँभाल सकने की क्षमता। यह मन से युद्ध या हर विचार को ज़बरदस्ती रोकना नहीं; श्रवण के लिए उपलब्ध, अपेक्षाकृत स्थिर मन की तैयारी है।

दम 05

इंद्रियों का संयम; हर दिखी या सुनाई चीज़ के पीछे तुरंत भागने के बजाय चयनपूर्वक ध्यान देना। यह शम के साथ मिलकर सुनने और जाँचने की जगह बनाता है।

उपरति 05

अनावश्यक बाहरी और मानसिक व्यग्रता से निवृत्ति, जिससे मन अपने उचित कर्तव्य और आत्म-जाँच में सहज टिक सके। यह संसार से मनमाना पलायन नहीं, बल्कि भटकाव की अनिवार्यता से भीतर की स्वतंत्रता है।

तितिक्षा 05

सुख-दुःख, अनुकूलता-प्रतिकूलता और असुविधा को बिना तुरंत प्रतिक्रिया में बहते हुए सह सकने की परिपक्वता। इसका अर्थ वास्तविक हानि, अन्याय या बीमारी को चुपचाप सहना नहीं; उद्देश्य है कि परिस्थितियाँ विवेक को अपने साथ बहा न ले जाएँ।

समाधान 05

बुद्धि और ध्यान की वह स्थिरता जिसमें साधक बार-बार मूल जाँच पर लौट सकता है। यह षट्सम्पत्ति का “समाधान” है; इसे किसी विशेष समाधि-अनुभव के बराबर न समझें।

छह अनुशासन 05

शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान: वे गुण जो सुनने और समझने के लिए मन को तैयार करते हैं। पाठ्यक्रम इन्हें अंतिम आत्मज्ञान या श्रेष्ठ व्यक्ति होने का प्रमाण नहीं बताता।

06

निर्वाण सूत्र • चरण 06

मनन

सुनी हुई बात को परखकर स्पष्ट करना

केन्द्रीय जाँच

मेरी वास्तविक शंका क्या है - और क्या वह जाँच से स्पष्ट होती है?

मनन 06

श्रवण में मिली शिक्षा पर सुसंगत तर्क, अनुभव और शिक्षक की मदद से विचार करना, जब तक विशिष्ट शंकाएँ स्पष्ट न हों। सामान्य चिंता या अंतहीन बौद्धिक बहस से इसका अंतर यह है कि मनन प्रश्न को अपने ऊपर लागू करता है।

तर्क 06

कथन में विरोधाभास और ग़लत मान्यता जाँचने का साधन। यह रास्ता साफ़ करता है; जागरूकता को कोई बाहरी वस्तु सिद्ध करने का यंत्र नहीं। जब तर्क केवल अपनी छवि बचाने या बहस जीतने लगे तो वह मनन से हट जाता है।

निश्चय 06

जाँच के बाद आई पक्की, संदेह से अपेक्षाकृत मुक्त समझ। यह किसी वाक्य को ज़ोर से दोहराकर बनाया गया आत्मविश्वास नहीं; “क्या यह मेरे अनुभव में सच है?” का ईमानदार परीक्षण उसका आधार है।

दृष्टि 06

निष्कर्ष याद करने से आगे, किसी बात का जीते-जागते स्पष्ट दिखाई देना। पाठ्यक्रम में समझ दृष्टि तब बनती है जब वह अपने अनुभव पर परखी जाए और प्रतिक्रियाओं में भी असर दिखे।

व्यवहार / व्यवहार का स्तर 06

रोज़मर्रा की दुनिया जहाँ वस्तुओं के अलग काम, व्यक्ति की भूमिका, संबंध, निर्णय और ज़िम्मेदारी मान्य हैं। “सब एक है” कहकर इस स्तर के भेद और उत्तरदायित्व को नकारना पाठ्यक्रम का आशय नहीं।

परमार्थ / अंतिम सत्य का स्तर 06

वह दृष्टि जिसमें बदलते नाम-रूपों का एक आधार देखा जाता है; घड़ा और थाली भिन्न काम के हैं, पर दोनों मिट्टी के ही रूप हैं। व्यवहार और परमार्थ के कथनों को उनके स्तर और उद्देश्य सहित पढ़ना चाहिए।

07

निर्वाण सूत्र • चरण 07

निदिध्यासन

स्पष्ट समझ में ठहरना

केन्द्रीय जाँच **स्पष्ट समझ को जीवन में स्वाभाविक कैसे होने दूँ?**

निदिध्यासन 07

श्रवण और मनन से स्पष्ट हुई समझ में बार-बार, सहजता से ठहरना ताकि पुरानी ग़लत पहचान की आदत कम हो और देखना स्वाभाविक बने। यह कोई वाक्य लगातार दोहराना, विचारों को हटाना या नया विशेष अनुभव पैदा करना नहीं है। बैठकर अभ्यास सहायक है, पर समझ को रोज़ के जीवन में भी उतरना है।

ध्यान 07

मन को एकाग्र, सूक्ष्म और निरीक्षणक्षम बनाने वाला अभ्यास। साँस, ध्वनि या किसी विषय पर ध्यान उपयोगी तैयारी हो सकता है; निर्वाण सूत्र में निदिध्यासन का केंद्र किसी अनुभव को पैदा करना नहीं, स्पष्ट हुई पहचान में ठहरना है।

एकाग्रता 07

मन को किसी एक विषय पर टिकाए रखने की क्षमता। यह अध्ययन और ध्यान में सहायता करती है, लेकिन किसी वस्तु पर जितनी देर मन टिके, उतनी देर को आत्मज्ञान न समझें। निदिध्यासन में विचारों से लड़कर एकाग्रता पैदा करने की ज़िद नहीं है।

पुरानी पहचान की वापसी 07

“मैं केवल शरीर हूँ” जैसा भाव समझ आने के बाद भी आदतवश लौट सकता है। उसे असफलता मानकर दबाना नहीं; उठती हुई पहचान को भी एक जानी जा रही घटना की तरह देखें और स्पष्टता में लौटें।

वासनाएँ 07

संस्कारों से बने पुराने मानसिक झुकाव, पसंद-नापसंद और आदतन प्रतिक्रियाएँ। समझ स्पष्ट होने के बाद भी वे कुछ समय उभर सकती हैं; उनका उठना अपने-आप ज्ञान की अनुपस्थिति का प्रमाण नहीं, बल्कि सजगता में देखे जाने की सामग्री है।

स्थिर होती समझ के संकेत 07

कम प्रतिक्रियाशीलता, जल्दी सँभलना, अपनी छवि बचाने की कम मजबूरी, करुणा और कम संदेह। ये किसी व्यक्ति की पूर्णता या आध्यात्मिक पदवी के प्रमाण नहीं, दिशा के व्यावहारिक संकेत हैं।

मानचित्र 04 • साधना की त्रयी

श्रवण → मनन → निदिध्यासन

तीनों को अलग-अलग अभ्यास न समझें। वे एक ही समझ को सुनने, संदेह से साफ़ करने और जीवन में स्वाभाविक होने देने की क्रमिक प्रक्रिया हैं।

श्रवण

शिक्षा को ठीक अर्थ में सुनना

→

मनन

विशिष्ट संदेह को जाँचकर स्पष्ट करना

→

निदिध्यासन

स्पष्ट समझ में बार-बार ठहरना

परिणाम: दृष्टि का परिवर्तन

याद किया हुआ उत्तर धीरे-धीरे जीते-जागते देखने में बदलता है। फिर यही स्पष्टता प्रतिक्रियाओं, संबंधों और निर्णयों में भी दिखाई देने लगती है।

08

निर्वाण सूत्र • चरण 08

नेति-नेति

ग़लत पहचान हटाने की जाँच

केन्द्रीय जाँच

जो देखा जा सकता है - क्या मैं केवल वही हूँ?

नेति-नेति

08

“यह नहीं, यह नहीं”: जो देखा, महसूस या सोचा जा सकता है, उसे अपने अंतिम स्वरूप के बराबर न मानने की विधि। इसका आशय शरीर, भावना या संसार को नष्ट करना नहीं; उनसे बनी “मैं यही हूँ” वाली ग़लत बराबरी हटाना है। अंत में शून्य को भी जानने वाली जागरूकता नकारने की वस्तु नहीं बनती।

शरीर

08

जीने और काम करने का वास्तविक व्यवहारिक साधन, जिसकी संवेदनाएँ और अवस्थाएँ लगातार बदलती हैं तथा जानी जाती हैं। “मैं शरीर नहीं” का आशय शरीर की उपेक्षा करना नहीं; जानने वाले को केवल शरीर की सीमा में बंद न मानना है।

इंद्रियाँ

08

देखने, सुनने आदि की क्षमताएँ जो अनुभव की सूचना लाती हैं। वे आवश्यक उपकरण हैं; जो इनके द्वारा आई सूचना को जानता है, उसकी जाँच इंद्रियों से अलग स्तर पर होती है।

मन

08

विचार, चाह, भावना और अर्थ जोड़ने वाली गतिविधि। मन की कोई अवस्था शांत या अशांत हो सकती है; दोनों अवस्थाएँ जानी जाती हैं। अतः मन का बदलना स्वयं जानने के बदलने के बराबर नहीं है।

मन की वृत्ति

08

मन में उठने वाली विचार या भावना की लहर। वृत्ति को देखा जा सकता है, इसलिए द्रष्टा-दृश्य की जाँच में वह दृश्य पक्ष पर है। ‘मैं’-विचार भी ऐसी ही एक वृत्ति है।

स्मृति

08

बीते अनुभव का इस क्षण मन में उठता रिकॉर्ड, जो हर बार कुछ अर्थ और भावना जोड़कर अनुभव को पुनः गढ़ सकता है। अपनी पूरी पहचान को स्मृति या जीवन-कहानी के समान मानना पाठ्यक्रम में जाँचने योग्य निष्कर्ष है।

भूमिका / छवि

08

माता, कर्मचारी, विद्वान, सफल या असफल जैसे सामाजिक और मानसिक परिचय। व्यवहार में ये उपयोगी हो सकते हैं, पर बदलते हैं और जाने जाते हैं; इन्हें पूरा स्वरूप मानने पर प्रशंसा-निंदा बहुत भारी हो सकती है।

जानने वाला

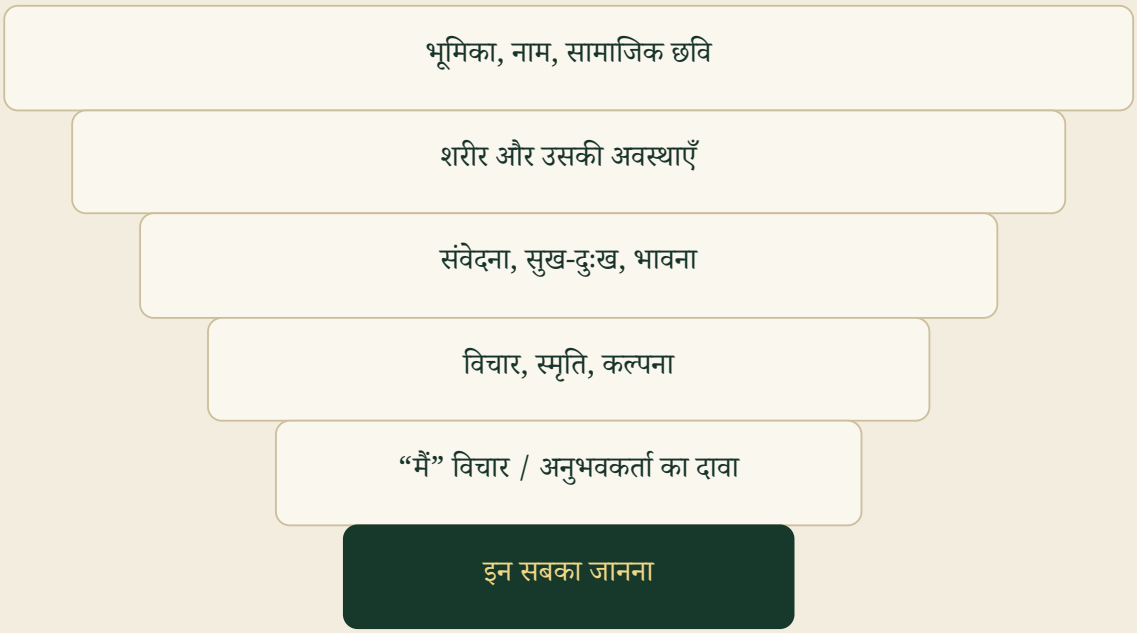
08

वह जागरूकता जिसके कारण शरीर, मन, विचार, भावना और ख़ालीपन का पता चलता है। इसे किसी और दृश्य वस्तु के रूप में पकड़ने का प्रयास उसी जाँच में फिर एक वस्तु जोड़ देता है; पाठ्यक्रम पहचान को वस्तु-संग्रह से अलग रखता है।

मानचित्र 05 • नेति-नेति

पहचान की परतें - क्या-क्या जाना जा सकता है?

“यह नहीं” का अर्थ किसी परत को मिटाना नहीं; केवल उसे अपने अंतिम स्वरूप के बराबर न मानना है।



महत्वपूर्ण: नेति-नेति निषेध का दर्शन नहीं है। शरीर और संसार व्यवहार में बने रहते हैं; जाँच केवल “मैं केवल यही हूँ” वाली बराबरी की है।

09

निर्वाण सूत्र • चरण 09

साक्षीभाव

अनुभव में खोए बिना उपस्थित रहना

केन्द्रीय जाँच **अनुभव बदलता है; उसे जानने वाला क्या है?**

साक्षी

09

वह जागरूकता जिसमें सभी अनुभव प्रकट होते और जाने जाते हैं। ‘गवाह’ शब्द एक संकेत है; इसका अर्थ मन के भीतर बैठा कोई दूसरा छोटा व्यक्ति नहीं। जब वस्तु और जानने वाले की कल्पित दूरी जाँची जाती है, वही साक्षी स्वयंप्रकाश जागरूकता है।

साक्षीभाव

09

भावना, विचार और क्रिया को पूरा स्थान देते हुए यह स्पष्ट रखना कि वे जाने जा रहे हैं। यह भावनाओं से कट जाना, सुन्न पड़ना या ज़िम्मेदारी छोड़ना नहीं। क्रोध या दुःख महसूस हो सकते हैं; बस उनसे संपूर्ण पहचान नहीं बनाई जाती।

जागरूकता / चेतना

09

वह मूल “जानना” जिसके कारण किसी विचार, संवेदना, भावना, दृश्य या ख़ालीपन का पता चलता है। निर्वाण सूत्र में आत्मा और साक्षी की चर्चा इसी जानने की ओर संकेत करती है; इसे शरीर के भीतर कोई चमकती वस्तु, रंग या विशेष अनुभूति न बनाएँ।

आत्मा / आत्मस्वरूप

09

व्यक्ति का वास्तविक जानने वाला स्वरूप; यहाँ इसे अनित्य शरीर-मन से अलग और शुद्ध जागरूकता के रूप में समझाया गया है। यह कोई निजी संपत्ति, स्थान में स्थित वस्तु या कभी-कभी मिलने वाला अनुभव नहीं। चरण 14 में इसी आत्मा और ब्रह्म की एकता की चर्चा आती है।

स्वयंप्रकाश

09

जो अपने होने और जानने के लिए किसी दूसरे जानने वाले या दूसरे प्रकाश पर निर्भर न हो। विचार को कोई जानता है; पर जागरूकता को जानने के लिए अनंत नई ‘देखने वाली’ परतें मानने की आवश्यकता नहीं।

साक्षीभाव का अनुभव

09

कभी आने वाली शांत या अलग-सी मानसिक अवस्था। यह साक्षी स्वयं नहीं है, क्योंकि वह अवस्था आती-जाती और जानी जाती है। “मैं साक्षी हूँ” वाला दावा भी विचार बन जाए तो उसे देखना चाहिए।

10

निर्वाण सूत्र • चरण 10

अनुभव

घटना और उसके आधार को अलग देखना

केन्द्रीय जाँच **क्या हर अनुभव समय में आने-जाने वाली घटना है?**

अनुभव

10

जो सीधे महसूस या जाना जाता है और समय में प्रकट होकर बदलता है। विषय, उसे सामने लाने वाले साधन, उसका जानना और स्मृति से जुड़ा अर्थ — इन पक्षों को अलग देखने पर समझ आता है कि हर अनुभव जागरूकता में प्रकट होता है।

विषय

10

अनुभव में सामने आने वाली चीज़; दृश्य, ध्वनि, विचार, सुख, डर या भीतर की शांति भी विषय बन सकते हैं। विषय को जानने वाला उससे अलग जाँच का केंद्र है।

अनुभव का साधन

10

इंद्रियाँ और मन जैसी क्षमताएँ जो किसी विषय को सामने लाती हैं। साधन की सीमा या परिवर्तन को जागरूकता की सीमा मान लेना जल्दबाज़ी है।

आध्यात्मिक अनुभव

10

प्रकाश, ऊर्जा, आनंद, गहरी शांति या समाधि जैसी असाधारण मानसिक-शारीरिक घटनाएँ। वे अर्थपूर्ण हो सकती हैं, पर आती-जाती हैं; पाठ्यक्रम उन्हें आत्मज्ञान का निर्णायक प्रमाण नहीं मानता। उन पर मालिकाना दावा या उन्हें दोहराने की भूख नया चिपकाव बन सकती है।

समाधि

10

यहाँ समाधि का प्रयोग बहुत गहरे ध्यान, एकाग्रता या शांति की विशेष अवस्था के लिए हुआ है। ऐसी अवस्था अत्यंत मूल्यवान हो सकती है, पर आरंभ और अंत वाली होने से उसे अपने-आप स्थायी आत्मज्ञान का प्रमाण नहीं माना जाता। इसे चरण 05 के “समाधान” से भी अलग रखें।

अनुभव और सत्य का भेद

10

अनुभव वह है जो प्रकट होता है; सत्य वह आधार है जो किसी एक प्रकट अवस्था पर निर्भर नहीं। सुखद, दुखद, उज्ज्वल और शांत सभी अनुभव बदल सकते हैं; जाँच उस जानने की है जिसमें वे आते-जाते हैं।

11

निर्वाण सूत्र • चरण 11

अनुभवकर्ता

“मुझे हुआ” कहने वाला कौन?

केन्द्रीय जाँच

“मुझे हुआ” कहने वाला अनुभवकर्ता कौन है?

अनुभवकर्ता 11

रोज़ के स्तर पर शरीर, मन और “मुझे हो रहा है” वाला अहंकार मिलकर अनुभव का दावेदार बनते हैं। यह लगातार स्थिर स्वतंत्र सत्ता की तरह लगता है, लेकिन “मैं महसूस कर रहा हूँ” का भाव स्वयं भी जाना जा सकता है।

‘मैं’-विचार / अहंवृत्ति 11

मन में उठने वाला “मैं”, जो किसी शरीर, भूमिका, काम या अनुभव से जुड़कर “मैंने किया”, “मुझे हुआ” कहता है। यह विचार आता-जाता है; आत्मविचार में पूछा जाता है कि इसे जानने वाला क्या है।

कर्ता / कर्ता-भाव 11

व्यवहार में काम करने वाले व्यक्ति का आवश्यक पक्ष; पर “मैं, एक अलग सीमित सत्ता, सब कुछ अकेला करा रहा हूँ” वाला भारी दावा कर्ता-भाव है। पाठ्यक्रम इस दावे को जाँचते हुए भी काम और ज़िम्मेदारी को बना रहने देता है।

भोक्ता / भोगने वाला 11

सुख-दुःख को “यह मेरे साथ हुआ, इसलिए मैं ऐसा हूँ” कहकर अपना लेने वाला अनुभवकर्ता। अनुभव मन-शरीर में होता है; उसे जानने वाले को उसी अनुभव से पूरी तरह परिभाषित करना पहचान की भूल है।

जाग्रत अवस्था 11

सामान्य जागने की दशा जिसमें इंद्रियाँ, विचार और बाहरी संसार का अनुभव होता है। पाठ्यक्रम इसे अनुभव की एक बदलती अवस्था की तरह देखता है, अंतिम जानने वाले के रूप में नहीं।

स्वप्न अवस्था 11

नींद में उभरता अनुभव-जगत; इसमें भी एक अनुभवकर्ता और अनुभव दिखाई देते हैं। जागने पर दृश्य बदल जाता है, इसलिए जाँच यह है कि बदलती अवस्थाओं का ज्ञान किसमें है।

सुषुप्ति / गहरी नींद 11

नींद की वह अवस्था जिसमें सामान्य अहं-वृत्ति और जाग्रत/स्वप्न जैसे विषय प्रकट नहीं होते। पाठ्यक्रम इसका उपयोग यह जाँचने के लिए करता है कि “मैं” को केवल जागती हुई मानसिक सामग्री तक सीमित मानना पर्याप्त है या नहीं; गहरी नींद को किसी दृश्य आध्यात्मिक अनुभव की तरह कल्पित न करें।

“मुझे हुआ” - इस वाक्य को खोलकर देखें

01 **विषय** + 02 **इंद्रियाँ / मन** + 03 **अनुभूति** + 04 **“मुझे हुआ”** + 05 **स्मृति / अर्थ**

पूरी श्रृंखला जानी जाती है

आत्मविचार का प्रश्न अनुभव को नकारना नहीं, बल्कि उस “मैं” दावे की प्रकृति देखना है जो अनुभव पर मालिकाना हक़ लेता है।

जाग्रत

इंद्रियाँ और बाहरी जगत प्रमुख

स्वप्न

मन अपना अनुभव-जगत रचता है

सुषुप्ति

सामान्य विषय और अहं-वृत्ति अप्रकट

तीनों अवस्थाएँ बदलती हैं - जाँच उस “मैं” की है जो अपने को केवल किसी एक अवस्था से बाँधता है।

12

निर्वाण सूत्र • चरण 12

आत्मविचार

प्रश्न को पूछने वाले तक ले जाना

केन्द्रीय जाँच यह “मैं” कहाँ से उठता है - और इसे कौन जानता है?

आत्मविचार 12

“मैं कौन हूँ?” को शब्दों की पहेली न बनाकर, हर उठते विचार और ‘मैं’-दावे से उसके स्रोत की ओर लौटना। “यह किसे आया?” — “मुझे” — “तो मैं कौन?” इस जाँच का व्यावहारिक क्रम है। उत्तर को रट लेने के बजाय पूछने वाले को देखें।

‘मैं कौन हूँ?’ 12

आत्मविचार का दिशासूचक प्रश्न। “मैं शरीर हूँ” या “मैं ब्रह्म हूँ” जैसा तैयार वाक्य देना इसके उद्देश्य को पूरा नहीं करता; प्रश्न का काम उस ‘मैं’ के जन्म और जानने को सीधा देखना है।

‘मैं ब्रह्म हूँ’ का बौद्धिक उत्तर 12

सही शब्द बोल देने पर भी वह मन में उठा एक विचार हो सकता है। पाठ्यक्रम के अनुसार शब्द का आशय संदेह-रहित पहचान में खुले, जो व्यवहार में डर, ज़रूरत और छवि-रक्षा के ढीले होने से भी दिखाई दे।

विचार का स्रोत 12

किसी दृश्य स्थान में छिपी वस्तु नहीं; वह जानना जिसमें “मैं” सहित हर विचार दिखाई देता है। शरीर में “मैं” का कोई केंद्र महसूस हो सकता है, पर वह संवेदना भी जानी जाती है।

ख़ालीपन या डर मिलने पर अगली जाँच 12

इन अवस्थाओं को अंतिम उत्तर या असफलता न मानें। वे भी अनुभव हैं; धीरे से पूछें कि उन्हें कौन जान रहा है। अभ्यास में डर बहुत बढ़े तो गति धीमी करें और विश्वसनीय शिक्षक से बात करें।

13

आत्मज्ञान

जो हमेशा था उसकी पहचान

केन्द्रीय जाँच **आत्मा पाने की कोई वस्तु है - या पहचानने का सत्य?**

आत्मज्ञान 13

अपने वास्तविक स्वरूप को शरीर और मन की सीमित पहचान से परे जागरूकता के रूप में स्पष्ट जानना। यह किसी नई वस्तु, शक्ति या दुर्लभ अवस्था की प्राप्ति नहीं; अज्ञान का हटना है। इसलिए इसे “पहले से प्राप्त की प्राप्ति” भी कहा गया है।

करुणा 13

दूसरों के अनुभव को गंभीरता से लेकर व्यवहार में दया और संवेदनशीलता रखना। आत्मज्ञान को किसी रहस्यमय अनुभव के दावे से पहचानने के बजाय पाठ्यक्रम कम भय, कम छवि-रक्षा और सहज करुणा जैसे जीवन-संबंधी संकेतों की बात करता है।

बौद्धिक समझ 13

आत्मा के बारे में सही विचार, वाक्य या सिद्धांत याद रखना। यह सीखने के लिए उपयोगी है, पर पाठ्यक्रम आत्मज्ञान को केवल धारणा नहीं मानता; उसमें पहचान साफ़, संदेह से अपेक्षाकृत मुक्त और व्यवहार में उतरी होती है।

प्रारब्ध 13

पाठ्यक्रम में पहले से चल पड़ा कर्म-फल, जिसके अनुसार शरीर-मन और जीवन की कुछ परिस्थितियाँ आगे चलती रहती हैं। आत्मज्ञान का अर्थ यह नहीं कि शरीर की क्रियाएँ या उनके व्यवहारिक परिणाम जादू से समाप्त हो जाते हैं।

पहचान, प्राप्ति नहीं 13

कोई व्यक्ति ‘आत्मा’ नाम की नई वस्तु हासिल नहीं करता; भूल दूर होने पर जो सदा मौजूद था वह स्पष्ट होता है। गले में पहले से पहना हार मिल जाने का उदाहरण इसी अर्थ को समझाता है।

कर्म / कर्मफल 13

कर्म व्यक्ति के स्तर पर किया जाने वाला काम और कर्मफल उसका परिणाम। पाठ्यक्रम भीतर के कर्ता-दावे को जाँचता है, लेकिन यह काम से बचने या परिणामों की ज़िम्मेदारी न लेने का बहाना नहीं है।

आत्मज्ञान के बाद व्यक्तित्व 13

शरीर, मन, भावना और व्यवहार चलते रह सकते हैं। पुराने झुकाव तथा प्रारब्ध भी दिख सकते हैं, लेकिन “मैं केवल यही हूँ” वाली पहचान की पकड़ घटती है। विचार या क्रोध का कभी उठना अकेले ज्ञान के अभाव का प्रमाण नहीं है।

14

ब्रह्मज्ञान

अनेक रूपों का एक आधार

केन्द्रीय जाँच **क्या आत्मा और ब्रह्म दो स्वतंत्र अंतिम सत्ताएँ हैं?**

ब्रह्म

14

पाठ्यक्रम के अद्वैत-वेदांतिक अर्थ में असीम, किसी दूसरे आधार पर निर्भर न रहने वाली सच्चाई, जो सब नाम-रूपों का आधार है। इसे दूर स्थित किसी विशाल वस्तु की तरह नहीं, अस्तित्व और चेतना के मूल स्वरूप की ओर संकेत करते हुए समझाया गया है।

ब्रह्मज्ञान

14

यह पहचान कि आत्मा, यानी अपने अनुभव का मूल जानना, और सब नाम-रूपों का आधार ब्रह्म अलग-अलग अंतिम सच्चाइयाँ नहीं हैं। यह किसी ब्रह्मांडीय दृश्य या क्षणिक समाधि का नाम नहीं।

सत्

14

“है-पन” या अस्तित्व; ब्रह्म का वह पहलू जिसका होना किसी दूसरे पर टिका नहीं। इसे किसी वस्तु के लंबे समय तक बने रहने से अलग रखें।

चित्

14

चेतना या जानना; जिसके कारण अनुभव का प्रकाशन होता है। यहाँ यह ब्रह्म का कोई जुड़ा हुआ गुण नहीं, उसके स्वरूप की ओर संकेत है।

आनंद

14

यहाँ आनंद का आशय मूल पूर्णता या अभाव-रहितता से है; हर समय प्रसन्न भावना, इंद्रिय-सुख या उत्साह बने रहना नहीं। सुखद अनुभव आते-जाते हैं, जबकि “आनंद” ब्रह्म के स्वरूप की ओर संकेत करने वाला शब्द है।

सत्-चित्-आनंद

14

अस्तित्व (सत्), चेतना/जानना (चित्) और पूर्णता (आनंद) - ब्रह्म की ओर संकेत करने वाले तीन दृष्टिकोण। ये तीन अलग वस्तुएँ, गुणों का जोड़ या तीन विशेष अनुभव नहीं हैं।

आत्मा–ब्रह्म अभेद

14

व्यक्ति के स्तर से देखा गया जानने वाला आत्मा और समस्त का आधार ब्रह्म अपने मूल में एक हैं। भिन्नता शरीर-मन जैसी उपाधि से प्रतीत होती है; इसका आशय यह नहीं कि व्यक्तिगत अहंकार असीम शक्ति का स्वामी बन गया।

उपाधि

14

कोई सीमित करने वाला माध्यम या परिचय जिसके कारण असीम पर सीमा दिखाई दे; इस पाठ्यक्रम में विशेषतः शरीर और मन। घट के भीतर का आकाश और बाहर का आकाश अलग लगते हैं, पर सीमा घट की है; आकाश की नहीं।

“अहं ब्रह्मास्मि”

14

“मैं ब्रह्म हूँ”: यहाँ ‘मैं’ सीमित शरीर, भूमिका या गर्वित व्यक्तित्व नहीं, वह जागरूकता है जो उन्हें जानती है। कथन का आशय अहंकार बढ़ाना नहीं, उसकी ग़लत सीमा समझना है।

“सर्वं खल्विदं ब्रह्म”

14

“यह सब ब्रह्म है”: भिन्न नाम-रूपों के पीछे एक आधार को देखना। व्यवहार में मनुष्य, नदी और अग्नि की अलग प्रकृति तथा उनसे जुड़ी ज़िम्मेदारियों का सम्मान बना रहता है।

माया

14

अद्वैत-वेदांत के संदर्भ में ब्रह्माश्रित वह शक्ति या उपाधि जिसके कारण एक आधार पर नाम-रूप, कारण-कार्य और भिन्नता का जगत अनुभव होता है। इसे ब्रह्म से स्वतंत्र दूसरी अंतिम सत्ता नहीं माना जाता; और “माया” कहने का अर्थ रोज़मर्रा के जगत को बिल्कुल अनुपस्थित या निरर्थक कहना भी नहीं है।

नाम-रूप

14

किसी वस्तु का नाम और पहचाना जाने वाला आकार। सोने से बने अलग गहनों या मिट्टी से बने अलग बर्तनों की तरह व्यवहार में रूप भिन्न हैं, पर उनका आधार एक है।

संसार / जगत

14

अनुभव में दिखाई देने वाला बदलता नाम-रूपों का जगत। व्यवहार में इसका उपयोग और महत्त्व है; परमार्थ की जाँच में इसे अपने-आप स्वतंत्र, अंतिम सत्य नहीं कहा जाता।

सत्य, मिथ्या, असत्य

14

तीन सटीक भेद: सत्य वह जो अपने लिए किसी दूसरे आधार पर निर्भर नहीं (ब्रह्म); मिथ्या वह जो दिखाई देता और काम आता है, पर अपने आधार से अलग नहीं टिकता (संसार, जैसे सोने का कंगन); असत्य वह जिसका कोई अस्तित्व ही नहीं (उदाहरण: खरगोश के सींग)। मिथ्या का अर्थ 'बिल्कुल नहीं है' नहीं।

निर्गुण ब्रह्म

14

ब्रह्म को अपने स्वरूप में, किसी सीमित नाम, रूप या बदलते गुण से रहित समझना। सत्-चित्-आनंद यहाँ तीन जोड़े हुए गुण नहीं, उसी सत्य की ओर संकेत करने वाले शब्द हैं।

सगुण ईश्वर

14

वही ब्रह्म जब माया-उपाधि सहित जगत के कारण, नियम, व्यवस्था और समष्टि-बुद्धि के रूप में समझा जाता है। निर्वाण सूत्र के अद्वैत संदर्भ में निर्गुण ब्रह्म और सगुण ईश्वर दो स्वतंत्र परम सत्ताएँ नहीं, एक ही सत्य को समझने के दो दृष्टिकोण हैं।

त्रिपुटी

14

ज्ञाता (जानने वाला), ज्ञान (जानना) और ज्ञेय (जानी जाने वाली चीज़) की तीन-तरफ़ा व्यवस्था। व्यवहार में यह चलती है; आत्मा-ब्रह्म की जाँच में अलग-अलग अंतिम सत्ताओं की कल्पना ढीली पड़ती है।

ज्ञाता

14

सामान्य व्यवहार में जानकारी लेने वाला व्यक्ति; गहरी जाँच में प्रश्न यह है कि उस ज्ञाता-भाव को भी कौन जान रहा है।

ज्ञेय

14

जिसे जाना जा सके, चाहे वह बाहरी वस्तु हो या मन का विचार। आत्मा को इसी प्रकार किसी ज्ञेय वस्तु में बदलना अज्ञेयता वाले अगले चरण की मूल उलझन है।

मानचित्र 07 • ब्रह्मज्ञान

आत्मा और ब्रह्म - दो दृष्टिकोण, एक आधार

अद्वैत का कथन व्यक्तिगत अहंकार को ब्रह्मांडीय शक्ति देना नहीं है। “मैं” की ग़लत सीमा हटाकर उसी चेतना-अस्तित्व को व्यक्ति और समष्टि दोनों दृष्टियों से देखना है।

व्यष्टि दृष्टि

आत्मा

शरीर-मन और अनुभवों का मूल जानने वाला स्वरूप

संकेत

सत् • चित् • आनंद

अस्तित्व, जानना और मूल पूर्णता

समष्टि दृष्टि

ब्रह्म

समस्त नाम-रूपों का स्वतंत्र, असीम आधार

आत्मा - ब्रह्म अभेद

उपाधि का भेद: शरीर-मन के कारण चेतना सीमित व्यक्ति जैसी प्रतीत होती है; जैसे घट की सीमा से “घटाकाश” अलग दिखता है, जबकि आकाश स्वयं विभाजित नहीं होता।

मानचित्र 08 • सूक्ष्म भेद

सत्य, मिथ्या और असत्य

“मिथ्या” को “झूठ” समझ लेना अद्वैत की सबसे सामान्य भूलों में से एक है। यह तीन स्तर अलग रखें।

सत्य	**जो अपने अस्तित्व के लिए किसी दूसरे आधार पर निर्भर नहीं।** पाठ्यक्रम में अंतिम उदाहरण: ब्रह्म।
मिथ्या	**जो दिखाई देता है, काम आता है, पर अपने आधार से स्वतंत्र नहीं।** जैसे सोने का कंगन: कंगन नाम-रूप है; सोने से अलग स्वतंत्र पदार्थ नहीं।
असत्य	**जिसका किसी स्तर पर अस्तित्व ही नहीं।** परंपरागत उदाहरण: खरगोश के सींग।

व्यवहारिक परिणाम: संसार को मिथ्या कहना संसार की उपेक्षा का लाइसेंस नहीं। शरीर, संबंध, नियम, कारण-कार्य और ज़िम्मेदारी व्यवहारिक स्तर पर प्रभावी रहते हैं।

15

निर्वाण सूत्र • चरण 15

अज्ञेयता

जानने वाला वस्तु क्यों नहीं बनता

केन्द्रीय जाँच

जानने वाला स्वयं किसी ज्ञेय वस्तु में कैसे बदले?

अज्ञेयता 15

आत्मा या ब्रह्म का किसी बाहरी वस्तु की तरह “ज्ञेय” न बन सकना। इसका अर्थ यह नहीं कि सत्य सदा अज्ञात है; बल्कि जानने वाला स्वयं किसी दूसरे जानने वाले के सामने रखी वस्तु नहीं बनता। इसलिए वह वस्तुरूप से अज्ञेय, किंतु स्वरूपतः स्वयंप्रकाश कहा जाता है।

अज्ञात 15

ऐसी वस्तु या तथ्य जिसका ज्ञान अभी नहीं मिला, लेकिन मिल सकता है। अज्ञेयता से अंतर यह है कि आत्मा कोई अभी-अनदेखी बाहरी वस्तु नहीं जिसे नई सूचना मिलते ही देखा जाएगा।

अवधारणा 15

मन में बनाया गया विचारात्मक ढाँचा जो सत्य की ओर इशारा कर सकता है। उपयोगी होने पर भी वह उस जागरूकता का स्थान नहीं लेता जो उस अवधारणा को भी जानती है।

शब्द की सीमा 15

भाषा वस्तुओं, गुणों और संबंधों का वर्णन करती है; जानने वाले को उसी ढाँचे में वस्तु बनाकर पूरी तरह नहीं समेट सकती। इसलिए शास्त्र के शब्द भूल हटाने के संकेत हैं, अपने-आप अंतिम अनुभव नहीं।

बुद्धि का विश्राम 15

ईमानदार जाँच के बाद बुद्धि का अपनी सीमा पहचानकर वस्तु बनाने की ज़िद छोड़ना। यह सोचने से डरना, सुस्ती या विवेक का त्याग नहीं; उपयोगी विचार के बाद अनावश्यक पकड़ कम होना है।

16

निर्वाण सूत्र • चरण 16

शून्यता और मौन

ख़ालीपन के पार जानना

केन्द्रीय जाँच

क्या ख़ालीपन अंतिम है - या ख़ालीपन भी जाना जाता है?

शून्यता

16

इस पाठ्यक्रम में “शून्यता” से मुख्यतः वस्तुओं, विचारों या मानसिक सामग्री के अनुपस्थित होने का अनुभवात्मक ख़ालीपन अभिप्रेत है। यह बौद्ध दर्शन की “शून्यता” की पूर्ण तकनीकी परिभाषा नहीं है। यह ख़ालीपन भी जाना जाता है, इसलिए निर्वाण सूत्र इसे अंतिम आत्मस्वरूप के बराबर नहीं रखता।

विचारों के बीच का अंतराल

16

दो विचारों के बीच दिखने वाला छोटा ख़ाली पल। यह ध्यान को मददगार संकेत दे सकता है, पर स्वयं आता-जाता है; जो अंतराल को जानता है उसकी जाँच अलग है।

बाहरी चुप्पी

16

ध्वनि का न होना या कम होना; परिस्थिति बदलते ही यह समाप्त हो सकती है। इसे पाठ्यक्रम के ‘आंतरिक मौन’ के बराबर न मानें।

आंतरिक मौन

16

वह अछूती जागरूकता जिसमें ध्वनि, विचार और उनके अभाव सभी जाने जाते हैं। यह केवल शांत मन की एक अस्थायी अवस्था नहीं; शोर के बीच भी इस जानने को देखा जा सकता है।

ख़ालीपन का भय

16

सीमित ‘मैं’-भाव के मिटने जैसी आशंका, जो शून्यता के अनुभव में उठ सकती है। इसे आध्यात्मिक सफलता या विफलता का प्रमाण न बनाएँ; धीरे चलें, अनुभव को देखें और आवश्यकता हो तो शिक्षक का सहारा लें।

मानचित्र 09 • मौन

ध्वनि से परे नहीं - ध्वनि सहित

बाहरी चुप्पी

ध्वनि कम है। परिस्थिति बदलते ही समाप्त हो सकती है।

मानसिक ख़ालीपन

विचार कम या अनुपस्थित हैं। यह भी आने-जाने वाली अवस्था हो सकती है।

शून्यता का अनुभव

कुछ न होने जैसा अनुभव। यह भी जाना जाता है - इसलिए स्वयं जानना नहीं है।

आंतरिक मौन

वह जानना जिसमें ध्वनि, विचार और उनके अभाव - सभी प्रकट होकर जाने जाते हैं।

मौन को अनुभव बनाकर पकड़ना नहीं

यदि मौन केवल शांति की अवस्था बन गया, तो शोर आते ही वह चला जाएगा। निर्वाण सूत्र का संकेत उस जानने की ओर है जो शोर और शांति - दोनों में उपस्थित है।

निर्वाण सूत्र • चरण 17

17

स्थितप्रज्ञ जीवन

समझ का साधारण व्यवहार में उतरना

केन्द्रीय जाँच **स्पष्ट ज्ञान साधारण जीवन, संबंध और कर्म में कैसा उतरता है?**

स्थितप्रज्ञ

17

जिसकी प्रज्ञा - अपने स्वरूप की स्पष्ट समझ - बदलती परिस्थितियों में स्थिर हो गई है। गीता-परंपरा के संदर्भ में वह सुख-दुःख, लाभ-हानि और प्रशंसा-निंदा के बीच संतुलित रहता है; इसका अर्थ भावना, शरीर की पीड़ा या मानवीय संवेदनशीलता का समाप्त होना नहीं है।

प्रज्ञा

17

यहाँ परिपक्व, स्पष्ट समझ; केवल जानकारी याद रखने की शक्ति नहीं। “स्थितप्रज्ञ” में यही समझ बदलती परिस्थितियों में अपेक्षाकृत स्थिर रहती है।

समता

17

सुख-दुःख, लाभ-हानि या प्रशंसा-निंदा के बीच अपनी मूल पहचान न खोना और संतुलित रहना। यह भावना दबाकर निर्जीव बनना नहीं; भावनाएँ आ सकती हैं, पर उनसे स्थायी ‘मैं’ नहीं बनाया जाता।

सहज अवस्था / सहज जीवन

17

अपने स्वरूप की समझ में बिना लगातार याद दिलाने या ज़ोर लगाने के जीना। अभ्यास धीरे-धीरे देखने का स्वाभाविक ढंग बन जाता है; काम, निर्णय, प्रेम और ज़िम्मेदारी उसी साधारण जीवन में चलते रहते हैं।

मुक्त जीवन

17

“मुझे कुछ बनना ही होगा” के भीतर के बोझ के बिना, हर क्षण को ईमानदारी, प्रेम और ज़िम्मेदारी से जीना। यह निष्क्रियता या समाज से अलगाव नहीं; झूठी सीमित पहचान की पकड़ से स्वतंत्र व्यवहार है।

त्वरित पुनरावृत्ति

सबसे अधिक उलझाने वाले भेद

पूरे PDF का एक-पृष्ठीय स्मरण। जब कोई शब्द भारी लगे, पहले देखें कि कहीं दो अलग स्तर तो एक नहीं कर रहे।

जानकारी ≠ आत्मज्ञान

पहला वस्तुओं के बारे में है; दूसरा जानने वाले की पहचान है।

अज्ञान ≠ मूर्खता

ज्ञानमार्ग में यह पहचान की भूल है।

जिज्ञासा ≠ हर बात पर शक

जिज्ञासा जाँच के लिए खुलती है; संशय रुक भी सकता है।

विवेक ≠ चालाकी

विवेक द्रष्टा-दृश्य और नित्य-अनित्य को स्पष्ट करता है।

वैराग्य ≠ निराशा या पलायन

वैराग्य भीतर की पकड़ ढीली करता है।

श्रद्धा ≠ अंधविश्वास

श्रद्धा जाँच को जगह देती है।

मनन ≠ अंतहीन सोच

मनन किसी साफ़ संदेह को सुलझाता है।

निदिध्यासन ≠ मंत्र-जैसा दोहराव

यह स्पष्ट समझ में ठहरना है।

नेति-नेति ≠ संसार से इनकार

केवल ग़लत ‘मैं यही हूँ’ पहचान हटती है।

साक्षीभाव ≠ भावनात्मक सुन्नपन

भावना रहती है, उसकी जानकारी भी रहती है।

अनुभव ≠ स्थायी सत्य

अनुभव बदलता है; जानने की जाँच बाकी है।

अनुभवकर्ता ≠ अंतिम साक्षी

‘मुझे हुआ’ वाला भाव भी जाना जाता है।

आत्मविचार ≠ तैयार शब्दों का उत्तर

प्रश्न पूछने वाले की ओर लौटाता है।

आत्मज्ञान ≠ नया विशेष अनुभव

यह सदा मौजूद की पहचान है।

आत्मा–ब्रह्म अभेद ≠ अहंकार का महिमामंडन

‘मैं’ का आशय जागरूकता है, निजी दावा नहीं।

मिथ्या ≠ असत्य

मिथ्या दिखता और काम आता है; असत्य कभी था ही नहीं।

अज्ञेयता ≠ अज्ञान

पहला वस्तु न बनने का स्वभाव; दूसरा हटने वाली भूल।

मौन ≠ आवाज़ का अभाव

यहाँ मौन वह जानना है जिसमें आवाज़ भी आती है।

समता ≠ भावना का दमन

भावनाएँ जानी जाती हैं, उनसे पहचान नहीं बनती।



निर्वाण सूत्र • साधक संस्करण

अंतिम शब्द पर मत रुकिए.

“जिसकी परिभाषा पढ़ी - अब देखें, वह आपके अनुभव में किस ओर संकेत कर रही है।”

ज्ञानमार्ग की शब्दावली तभी जीवित होती है जब शब्द आपको स्वयं की जाँच तक ले जाएँ। यदि कोई परिभाषा केवल याद रह जाए और दृष्टि न बदले, तो वह अभी सूचना है। उसे श्रवण, मनन और प्रत्यक्ष निरीक्षण से फिर खोलिए।

यह शब्दावली निर्वाण सूत्र के 17 मुख्य चरणों और प्रत्येक चरण के प्रश्न-उत्तर पाठों पर आधारित seeker companion है। परिभाषाएँ इसी पाठ्यक्रम के संदर्भ में हैं; अन्य दार्शनिक या आध्यात्मिक परंपराएँ कुछ शब्दों का अलग तकनीकी अर्थ उपयोग कर सकती हैं। यह पाठ वीडियो, शिक्षक-संवाद और अपने प्रत्यक्ष अवलोकन का विकल्प नहीं, बल्कि उन्हें समझने का सहायक मानचित्र है।